Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education

Vol. VIII, Issue No. XVI, Oct-2014, ISSN 2230-7540

REVIEW ARTICLE

निराला के जीवन वृत्त का विश्लेषणात्मक अध्ययन

AN INTERNATIONALLY INDEXED PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL

www.ignited.in

Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. VIII, Issue No. XVI, October-2014, ISSN 2230-7540

निराला के जीवन वृत्त का विश्लेषणात्मक अध्ययन

Prem Chandra Tiwari

Research Scholar, Sai Nath University, Ranchi, Jharkhand

----------X----------

पारिवारिक परिस्थितिया :–

हिन्दी साहित्य आदिकाल से नवयुग तक की दीर्घ प्रवाहिनी अनेक महान रचियताओं के आवरण से पूर्ण है, जिन्होंने अपने युगानुभव का जीवन्त चित्रण अपने काव्य में कर समाज में जागृति का अद्भुत संचार किया।

आधुनिक काल के स्वर्णयुग 'छायावाद' में एक ऐसी ही कवि प्रतिभा सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' हैं, जो किसी एक अवधि, एक काव्यधारा विशेष अथवा समाज एवं राष्ट्र की परिसीमा में कभी न बँध सके।

निराला का जीवन पौरूषमय पर्वत से निःसृत करूणानीर से प्रवाहित स्त्रोतवाहिनी का भव्य दृष्टान्त है। जीवनक्रम में विभिन्न आरोही–अवरोहों ने जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त उनके मानस एवं तत्सृजित साहित्य को एक अद्भुत गतिशील सौष्ठव दिया है।

हिन्दी साहित्य की अमर विभूति महाप्राण निराला जी का जन्म सन् 1867 ई0 में बंगाल के महिषादल राज्य में हुआ था वैसे तो इनके पूर्वज उत्तर प्रदेश उन्नाव जिले के 'गढ़ाकोला' के निवासी थे। इसी गाँव के निम्न–कान्यकुब्ज ब्राह्मण समाज में एक परिवार 'निराला के पितामह पंडित शिवधारी तिवारी का था जिनके तृतीय पुत्र रामसहाय तिवारी जीविकार्जन के लिए बंगाल में पुलिस सेवा में नियुक्त हुए, बंगाल स्थित महिषादल राज्य में सिपाही के पद पर कार्य करते–करते राज्यकोष संरक्षक के आसन तक इन्होनें उन्नति की। पं0 रामसहाय तिवारी के प्रथम एवं एकमात्र पुत्र सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' थे। प्रथम पत्नी का निधन होने के पश्चात् निःसन्तान होने के कारण इन्होंने दूसरा विवाह रूक्मिणी देवी से किया। रूक्मिणी देवी अत्यन्त सुशील, रूपवती महिला थी। धार्मिक संस्कारों में विशेष रूचि रखती थी।''

''माघ शुक्ल एकादशी सम्वत् 1653 (सन् 1867) ई0 को इस जन्मदात्री ने पुत्र को जन्म दिया जिसका नाम सूर्ज कुमार तथा साहित्य क्षेत्र में सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' प्रसिद्ध हुआ।''

दुर्भाग्य से माँ की वाल्सल्य वर्षा कवि की मन–अवनि पर अधिक समय न हो सकी तथा पुत्र की तीन वर्ष की आयु होते ही रूक्मिणी देवी का शरीरान्त हो गया।

माँ के अभाव तथा पिता की देखरेख में निराला का शैशवकाल व्यतीत हुआ पिता कर्मठ तथा अनुशासनप्रिय व्यक्ति थे। अतः पिता के कठोर नियन्त्रण में ही निराला को लाड़–दुलार मिला।

आठ वर्ष की अवस्था में निराला का यज्ञोपवीत संस्कार हुआ समाज के वर्गगत भेद के प्रति विद्रोह का भाव इस अवसर पर उनके हृदय में प्रथमतः उत्थित हुआ।

महिषादल में निराला की शिक्षा प्रारम्भ हुई। इन्होंने सामान्य प्राथमिक शिक्षा बंगला पाठशाला में ही प्राप्त की अध्ययन पूर्ण होने के बाद उन्हें महिषादल हाईस्कूल में भेजा गया।

इस विद्यालय से अंग्रेजी एवं संस्कृत की सामान्य शिक्षा प्राप्त हुई महिषादल में रहने के कारण कवि बंगला भाषा से मातृभाषावत् परिचित थे किन्तु हिन्दी के स्थान पर उन्हें अवधी एवं वैसवाड़ी का ही ज्ञान था इनकी विद्यालय शिक्षा नवीं कक्षा तक ही रही उच्चशिक्षा प्राप्त करने में उनकी रूचि शेष न रही। हाईस्कूल के पठनकाल में ही इन्होंने संगीत, घुड़सवारी तथा कुश्ती में दक्षता प्राप्त की, क्रिकेट और फुटबाल खेलने में प्रवीण रहे।

तरूणावस्था एवं वैवाहिक जीवनः–

चौदह वर्ष की अवस्था में निराला का विवाह–सम्बन्ध पंडित रामदयाल द्विवेदी की पुत्री मनोहरा देवी से हुआ, मनोहरा देवी सौन्दर्य शीला तो थी ही पढ़ी–लिखी तथा सादा ग्रहस्थ जीवन व्यतीत करने वाली कर्मठ नारी भी थी इस सक्षम नारी के ज्ञान–प्रकाश से अभिभूत होकर निराला संगीत एवं साहित्य के आकर्षण से बंध सके।

''प्रिया–प्रणय के प्रलोभन के कारण निराला हाईस्कूल की परीक्षा में अनुत्तीर्ण हुए तथा प्रथम बार पिता के कोपभाजन बने। तरूणावस्था में निराला पिता के ही आश्रय पर पत्नी सहित पोषित हो रहे थे, ग्रहस्थी का दायित्व–भार उनके कन्धों पर नहीं था और समाज के नियमों एवं परम्पराओं का उल्लंघन करना उन्हें प्रिय था अतः पिता द्वारा गृह–निष्कासन पर वे श्वसुरालय में चले गये जहाँ उनका भव्य सत्कार हुआ यही से उनकी हिन्दी की ओर रूचि तथा साहित्य साधना प्रारम्भ हुई।''

निरन्तर अस्वस्थता के उपरान्त हार्निया से पीड़ित पिता की मृत्यु सन् 1917 ई0 में हो गई स्वछन्द एवं उच्छंखल जीवन जीने वाले निराला को पिता के अभाव में गृहस्थ जीवन के उत्तरदायित्व का प्रथमतः अनुभव हुआ।

परिवार के भरण–पोषण के लिए उन्होंने महिषादल प्रस्थान किया, पिता से अधिक शिक्षित होने के कारण इन्हें चिट्ठी–पत्री, तहसील–वसूली तथा कचहरी–अदालत से सम्बन्धित काम–काज साधारण वेतन पर प्राप्त हुआ। गृहस्थ जीवन की ओर गम्भीर

www.ignited.in

होते ही निराला के प्रतिकूल भाग्य ने इनके वैवाहिक सुख को अल्प युवावस्था में ही समाप्त कर दिया।

श्वसुर गृह में पुत्र एवं पुत्री को जन्म देकर सन् 1918 में श्रीमती मनोहरा देवी ने अन्तिम प्रस्थान किया। सन् 1914 में प्रथम विश्वयुद्ध की समाप्ति पर फैले इन्फ्लुएंजा के महारोग ने इनके परिवार के अधिकाँश सदस्यों को ग्रस लिया दाम्पत्य जीवन के प्रथम चरण पर ही एकाँकी रह गये निराला के कन्धों पर चचेरे भाई के बच्चों समेत छः बाल सदस्यों का पालन–भार आ गया अतः निराला धनार्जन के उद्देश्य से पुनः महिषादल में कार्यरत हो गये।

निराला का व्यक्तित्वः–

कहते है, कि शक्तिवान शरीर में समर्थ आत्मा का वास होता है। निराला का जीवन कष्टपूर्ण वैषम्यों का उदाहरण था और उनका व्यक्तित्व अजेय एवं आत्माभिमानी रणवीर का परिचालक था। निराला के व्यक्तित्व को लक्षित करते हुए ही डा0 धनन्जय वर्मा ने लिखा है–

''एक कर्जस्वित अहं का धारण असाधारण शरीर ही कर सकता है जो निरन्तर संघर्षों में कष्टों को भी झेल सके।''

निराला का विशाल हृष्टपुष्ट एवं पौरूषमय कृषक शरीर बैसवाडे की ही देन है सामान्य से अधिक लम्बी कदकाठी तथा युवावस्था में तैराकी, कुश्ती आदि में नियमित अभ्यास ने उनकी देहयष्टि को अनूठे सौन्दर्य से मंडित कर दिया था– प्रत्यक्षदर्शी डा0 रामविलास शर्मा के शब्दों में–

''व्यक्तित्व की सूक्ष्म तलवार के लिए उन्हें म्यान भी ऐसा अच्छा मिला है कि बहुत से लोग उसी को देखते रह जाते है। युक्तप्रान्त के निवासियों में वे असधारण रूप से लम्बे है। लखनऊ के रायल सिनेमा में बैठे हुए पठान को यह यकीन दिलाना मुश्किल था कि निराला इसी मुल्फ का है और पश्तो नहीं बोल सकता।''

निराला को स्वयं अपने स्वस्थ एवं दृढ़ डील–डौल पर अभिमान था कृषक वातावरण में व्यायाम आदि से सुगठित बने कवि–व्यक्तित्व के गवौन्नत सौष्ठ व की तुलना उनके परम मित्र नवजादिक लाल ने ग्रीस रोम की प्रतिमाओं से की हैं किन्तु दैहिक कठोरता के बावजूद मुख पर रूक्षता अथवा अहंकार का कोई स्थान नहीं था, बालसुलभ मन्द मुस्कान उनके पतले अधरों की शाश्वत सखी थी। निराला के अद्भुत व्यक्तित्व की समग्र बाहय शोभा का उद्घाटन उनके समकालीन गंगाप्रसाद पांडेय ने इन शब्दों में लिखा–

''लम्बा चौड़ा विशाल मांसल शरीर बड़े–बड़े रतनारे नेत्र, लम्बी शाल की शाखा सी भुजाएँ, शाश्वत मन्द मुस्कान में सिक्त पतले आकर्षिक होंठ, कवियोचित कम्बुकंठ और वृषभ कंध जान पड़ता था मैं किसी रोमन मूर्ति के सामने खड़ा हूँ।''

ऐसी अवस्था में निराला सड़को पर भ्रमण करते हुए दृष्टि का आकर्षण उपादान बने रहते थे, किन्तु जिस दिन किसी कवि–सम्मेलन अथवा साहित्यक सभा में उनका भाषण अथवा वाचन होता तो उनकी तत्परता विशेष दर्शनीय होती थी उस दिन अपने घर का झाड़ू–बुहारी मनोयोग से करते, सुगन्धित साबुन से स्नान करते तथा शाम तक धुले वस्त्र पहनकर बालों में इत्र लगाकर तैयार हो जाते, बाहय सौन्दर्य की ओर निराला की अपेक्षा से भी उनकी छवि–दर्शनीयता में व्यवयता की मात्रा कम न हो सकी तथा उनके अन्तःकरणीय स्वरूप को भी सार्थक बनाने में यह पूर्णतः सफल रही।

निराला का आन्तरिक व्यक्तित्व :–

निराला के व्यक्तित्व का यह द्वितीय पक्ष आत्मिक सौन्दर्य की सात्विक निर्मल आभा से परिपूर्ण है। कवि का अन्तरतम जीवनाभावों तथा युगावस्था में निरन्तर परिवर्तनीयता से आन्दोलित रहा जिसका प्रकाशन उनकी रचनाशीलता में प्रत्यक्षतः हुआ है, मातृहीनता एकाँकीपन और पिता के अनुशासनपूर्ण कठोर व्यवहार ने बालक निराला को अन्तर्मुग्धता प्रदान की, उनकी जिज्ञासाओं को आत्मकेन्द्रित कर उन्हें चिन्तनशील एवं स्वनिर्भर बनाया तो दूसरी ओर उनमें स्वभावगत औदात्य सहिष्णुता तथा निर्भीकता का स्थायी गुण भी भर दिया।

स्वभाव की उग्रता निराला को पैतृक सम्पत्ति के रूप में मिली तथा पारिवारिक जीवन का छायाचित्र उनके मानसपटल पर सदैव अंकित रहा। अतः वे प्रारम्भ से ही रूढ़ियों के प्रति प्रतिक्रियायें व्यक्त करते थे। कान्यकुब्ज समाज की परम्पराओं के पूर्णतः प्रतिकूल होकर पुत्री–परिणय में वैवाहिक रीतियों के प्रति विद्रोह से लेकर उस समाज के खान–पान, रहन–सहन आदि के नियमों का भी उल्लघंन उन्होनें दृढ़तापूर्वक किया, उनका कथन था–

''रूढ़ियों से अभी जन–मस्तिष्क पूर्ववत जकड़ा हुआ है इन पर बार–बार प्रहार द्वारा इसकी श्रृंखला तोड़ देनी है।'' भाग्य और व्यर्थ मान्यताओं से विद्रोह के लिए वे दृढ़ प्रतिज्ञ थे उनका अहं इतना ओजस्वी था कि किसी भी क्षेत्र में उन्होंने समझौता करना स्वीकार नही किया।

कवि के दुर्दम्य पुरूषार्थ ने आर्थिक संघर्षों में अनवरत संलग्न रहने की शक्ति उन्हें दी।

एक ऐसे युग में उत्पन्न होकर ब्रह्य शिष्टाचार एवं दिखावटी व्यवहार को सब कुछ मानते थे। निराला ने विशिष्टता के नये प्रतिमान उत्पन्न किये उनके चरित्र की सबसे बड़ी विशेषता शिष्टाचार के कृत्रिम स्वरूप को खंडित कर सत्याचार की प्रतिष्ठा करने में थी।

अपनी स्पष्टवादिता एवं निर्भीक वाचन के कारण उन्हें उस युग में उत्कृष्ट साहित्यक विरोध का सामना करना पड़ा इन विशेषताओं ने जहाँ उनके प्रति अनेक लोगों में भ्रम एवं आक्रोश को उत्पन्न किया, वहीं युवा 'पीढ़ी' के रचनाकारों को अपनी स्वच्छन्द भावनाओं से प्रभावित किया। कृत्रिमता एवं मिथ्या भाव से निराला नितान्त अपरिचित थे यही कारण है, कि वे स्वयं श्रेष्ठ होने का विश्वास रखते हुए भी दूसरे साहित्यकारों के प्रति निर्मल स्नेह सद्भावना एवं सम्मान उनके विशाल हृदय में व्याप्त था।

निराला का जीवन सादगी का सजीव दृष्टान्त था। रहन–सहन में कहीं अभिजात्य का चिन्ह न था अपने सभी कार्य भोजन पकाने से लेकर गृहस्थल की देखभाल उनकी दैनन्दिनी में शामिल थे वे अपनी दैनिक चिन्ताओं को विस्मृत कर इस अवढरदानी ने परिजनों की आर्थिक कठिनाइयों के समाधान को प्राथमिकता दी। उन्होंने एक सन्त के समान अभावयुक्त जीवन व्यतीत किया किन्तु निर्धन व्यक्ति को तनिक भी आवश्यकता को लक्षित कर वे अपने नये परिधान लिहाफ, कम्बल, जूते आदि जो उनके लिए भी आवश्यक थे दान कर देते थे।

निराला के व्यक्तित्व में महामानवीयता का पूर्ण अभास मिलता है जिसमें साधारण मनुष्य से पृथक दिव्यगुण–प्रवृत्तियों का समावेश तथा संवेदनाओं को अविरल प्रवाह है किन्तु महामानव होते हुए भी कतिपय मानवोचित दुर्बलताओं की अवस्थिति उनके व्यक्तित्व में परिलक्षित होती है।

भागीरथ मिश्र कहते हैं– ''किसी भी सभा में उनकी उपस्थिति तब तक एक आतंक का वातावरण बनाये रखती थी, जब तक कि वे स्वयं कोई विनोदपूर्ण फबती नहीं कसते थे लेकिन उनके अत्यन्त विनोदपूर्ण अवसर पर भी लोगों को संयत हास–परिहास करने का ही साहस होता था, क्योंकि ऐसा भय सदैव रहता था कि निराला जी की विनोद–मुद्रा कहीं उग्र क्रोध में परिणत न हो जाये।''

इसी अवगुण के कारण स्वयं हृदय में किसी के लिए वैर भाव न होते हुए भी उन्हें अपने मित्रों से भी विरोध मिला निरन्तर उपेक्षापूर्ण व्यवहार के कारण उनका कोमल मन इतना खीझा हुआ था कि तनिक प्रशंसा भी उन्हें प्रसन्न करने को पर्याप्त थी। जीवन–भर विषमताओं और अनौचित्य के विरूद्ध कर्मरत उनका हृदय हर ओर व्याप्त निज–स्वार्थ की निकृष्ट कृति से इतना क्षुब्ध हो गया था कि कहीं वे करूणार्द होकर मानव कल्याण के लिए दुःखित हो जाते तो कहीं व्यंग्यतापूर्ण उक्ति वाचन करने लगते आद्योपान्त संघर्षो के क्रम ने उनके व्यक्तित्व को विकसित और खंडित भी किया भौतिक कष्टों और दैवी विपत्तियों की अजीवन अवस्थिति के मध्य निराला का दार्शनित्व भी उर्ध्वमुखी हुआ 'समन्वय' सम्पादनकाल में उन्होंने अद्वैतवादी दर्शन के गहन मंथन एवं मनन द्वारा आत्मिक अहम को पोषित किया इसी को लक्षित करते हुए गंगाप्रसाद पांडेय ने लिखा है–

''निराला अहंकारी नहीं है, हाँ वह आत्मचेतना अवश्य है अपनी दार्शनिक मनोवृत्ति के कारण संसार से अलगाव की जो एक आस्था है वहीं निराला में अहंकार सी जान पड़ती है।''

निराला के जीवन काल में मानसिक विशान्ति की अवधि में वे व्यवहारिक जगत से विमुख होकर पूर्णतः अंतःकेन्द्रित हो उठे थे कभी एकदम प्रसन्न हो उठते और कभी उदासीन नियति के कठोर स्वरों से उनकी चेतना अव्यवस्थित असमान्य अवश्य हुई किन्तु निराला का काव्य–व्यक्तित्व तटस्थता के गुण से सम्पूर्ण वाड्मय में उज्जवलाभासित रहा है। दार्शनिक चिन्तन से वे प्राप्त निर्वैयक्तिक्ता के आधार पर एक ओर आत्मानुभूतियों का सहज प्रकाशन हुआ तो दूसरी ओर लोकजीवन की समान्य गतिविधियाँ भी अंकित हुई स्वयं निराला विराट बादल की भाँति थे– सदा अपराजित, अभी न होगा मेरा अंत–के विश्वास से आपूर्ण–जो एकाध स्थल पर श्रांत–कलात होकर भी महाकाव्य की धीर गम्भीर मानव नायक भी हो सकता है प्रो0 पी0 जयरामन का कथन है–

''व्यक्तित्व की असाधारण परिव्याटित के कारण ही उनके साहित्य की पृष्ठभूमि में भारतीय दर्शन, ऐतिहासिक चेतना, सांस्कृतिक आत्मा, सामाजिक और राजनीतिक क्रान्ति–सभी एक जगह एकत्र हो गये है।''

इस सामान्य मानव कवि में ओजत्व के साथ कोमल सौहार्द्र तथा सिंह–गर्जन के साथ श्रृंगार एवं कल्पना का सुधा–वर्णन भी है। अतः प्रभाकर माचवे का कथन उचित प्रतीत होता है–

''हिन्दी का यह अभिशप्त सूफी, यह मस्ताना फकीर, यह क्रान्तिकारी सौन्दर्यदर्शी, यह दार्शनिक सहृदय सब विशेषणों के बाद भी विशेष्य है।''

अपने समकालीन कवियों की तुलना में निराला की छवि एक ओर जटिल विरोधाभासों से परिपूर्ण है। विभिन्न विषम गुणों से संयुक्त होकर भी निराला के व्यक्तित्व में सत्य का प्रकाश तथा निश्छलता का सामंजस्य है नावीन्य और प्राच्य का अद्भुत संगम है जो उन्हें विराट और असाधारण की उपमा देता है।

निराला का काव्य–कृतित्वः–

हमें यह देखना है कि किन विषम परिस्थितियों ने उनके प्रसन्न और उल्लासपूर्ण व्यक्तित्व को क्रमशः अवसाद और असन्तुलित मानसिक अवस्था में परिणत कर दिया हमें निराला जी के व्यक्तित्व में होने वाले परिवर्तनों के तथ्यों की जानकारी प्राप्त करनी आवश्यक है।

''यद्यपि निराला जी को जीवन प्रारम्भ से ही संघर्षों का सामना करना पड़ा, परन्तु तरूणावस्था में उन्होंने इन संघर्षों की परवाह नहीं की और विपरीत परिस्थितियों के रहते हुए भी निरन्तर शक्ति सौन्दर्य और अह्लाद से भरी काव्य रचनायें प्रस्तुत करते रहें''

कविता के क्षेत्र में हम देख चुके हैं सन् 1936 तक की उनकी कविता की मुख्य चेतना उल्लासमयी है यदि हम उनके गद्य उपन्यासों को देखें तो उनकी अप्सरा (1931), अलका (1933), प्रभावती (1936) और निरूपता (1936) उनकी यह कृतियाँ पूर्ण स्चछन्दतावादी मनोवृत्ति का परिचय देती है इसके पश्चात् की रचनाओं में नई प्रवृत्तियाँ भी दिखाई देने लगी थीं सन् 1927 के आस–पास 'मतवाला' का सम्पादन कार्य छोड़कर निराला जी कुछ दिनों तक अपने गाँव गढ़ाकोला (जिला उन्नाव) में रहने लगे थे इस समय उनकी कोई नयी रचना का प्रकाशन नहीं हुआ जिससे उनका आय का कोई साधन न था।

इनके परिवारिक दायित्व में इनका अपना परिवार एक पुत्र और एक पुत्री तो थी परन्तु कई भतीजे भतीजियों की जिम्मेदारी उनका भरण–पोषण ये ही करते थे।

गाँव पर खेती बारी की कोई व्यवस्था नहीं थी, तब निराला जी लखनऊ गंगा पुस्तक माला प्रकाशन संस्था में आये इसी प्रकाशन संस्था से 'सुधा' नामक पत्रिका प्रकाशित होती थी उसके लिए कविता लेख लिखने लगे, परन्तु इस माध्यम से इनकी आय इतनी कम थी कि ग्रहस्थी का भार उठाना कठिन था। और 1930–31 के आस–पास इन्होनें सुधा पत्रिका के सम्पादकीय कार्य के अतिरिक्त उपन्यास और कहानियाँ लिखने लगे पर इनकी आर्थिक कठिनाईयाँ अब भी दूर न हुई। निराला जी के स्वभाव में माँगने की प्रवृत्ति रंचमात्र न थी अतएव जो कुछ मिलता उसी में संतोष करना पड़ता।

निराला जी में स्वाभिमान की प्रवृत्ति भी इतनी प्रमुख थी कि वे किसी की एक बात सुनने वाले न थे सुधा के सम्पादकीय कार्य में उन्हें यशेब्ठ स्वतन्त्रता रहती थी पर वे अपने मालिक को अपना मित्र समझकर ही व्यवहार करते थे। अगर दूसरे पक्ष से असम्मान का भाव दिखाई देता तो निराला जी के लिए

असहनीय था। इन्हीं कारणों से निराला जी सुधा का सम्पादकीय कार्य बहुत दिनों तक नहीं कर सके।

फिर कुछ दिन बाद सन् 1932 में कलकत्ते से प्रकाशित रंगीला नाम का एक साप्ताहिक पत्र निकाला गया, मगर यह कुछ दिन ही चल पाया और निराला जी का सम्पर्क इस पत्र में कुछ दिन ही रह पाया।?

1933 के पश्चात् निराला जी फिर लखनऊ में रहे, परन्तु इस दौरान उन्होंने कहीं नौकरी नहीं की और साहित्य लेखन में ही अपना खर्च चलाते रहे परन्तु उनके यहाँ मेहमानों की कमी न थी निराला जी अपना ध्यान कम रखते और अतिथियों का अधिक इसी समय इनका लड़का रामकृष्ण त्रिपाठी लखनऊ के भारतखण्डे संगीत विद्यालय मे संगीत शिक्षा पर अध्ययन करने लगा उसका भी खर्च निराला जी को ही वहन करना पड़ता था।

पुत्री का निधन परिवर्तित मनोभावनाः–

सन् 1935 के आसपास उनकी एकमात्र पुत्री सरोज का कुछ कारूणिक परिस्थितियों में निधन हो गया। सरोज की स्मृति कविता में निराला जी ने उस घटना को लेकर मर्मस्पर्शी उद्‌गार व्यक्त किये। इसी समय से उनकी मनोदशा में परिवर्तन आने लगा फिर लखनऊ उन्हें छोड़ देना पड़ा, कुछ दिन वे उन्नाव युग मन्दिर में सुमिता कुमारी सिन्हा तथा उनके पति चौधरी साहब के साथ रहे।

गीतिका के अनेक गीत यही लिखे गये इस अवधि में निरन्तर निराला जी की व्यक्तिगत मनोदशा भी विकार की सूचना देने लगी थी, वे अकारण ही एकाएक हँस पड़ते थे। कभी–कभी अपने आप बाते करने लगते थे और कभी स्वयं प्रश्न करते और खुद ही उत्तर देते थे। आरम्भ में वे बड़े संकोच के साथ रहते थे।

विच्छेप की स्थितिः–

इसमें सन्देह नहीं ''कि 1941 के बाद निराला जी की मनोदशा और चिन्ताजनक होती चली गई और वे वास्तविकता से दूर काल्पनिकता में व्यवहार करने लगे, वे आपस की मण्डली या गोष्ठी में ही नहीं बल्कि सार्वजनिक रूप में भी अपनी विश्रंखल मनोवृत्तियाँ का इजहार करने लगे थे।''

सन् 1950 के आसपास वे प्रयाग में रहने लगे और 10 वर्षों तक वही रहे। इसी अवधि में उनकी मनोदशा के बहुत से वर्णन पत्र–पत्रिकाओं में भी छपे। कुछ लोगों ने यह बताने का प्रयत्न किया कि निराला की मानसिक स्थिति बिल्कुल स्वस्थ है और उनमें विकार देखने वाले स्वयं विकृत बुद्धि के हैं। जिन्होंने निराला के व्यक्तित्व को नया मोड़ दिया और क्रमशः उन्हें अवसाद और विच्छेप की स्थिति में पहुँचाया है। व्यक्तित्व की पहचान उन्हें सन् 1915 से होने लगी थी। जब निराला जी किशोरावस्था को पाकर तरूण आयु में प्रवेश करने लगे थे और जब उन्हें अपने दायित्व को समझने का बोध होने लगा था उनके सभी संस्मरण लेखकों ने और स्वयं उन्होंने भी इस बात की सूचना दी कि उनका आरम्भिक समय काफी अच्छी परिस्थितियों में व्यतीत हुआ।

यद्यपि उनके पिता बंगाल के महिषादल स्टेट में एक साधारण कर्मचारी थे, परन्तु निराला जी का सहचर्य विशिष्ट व्यक्तियों से हो गया था और वे उनके साथ रहकर अच्छी जानकारी प्राप्त कर लेते थे वे फुटबाल खेलने में निष्णात थे और राजदरबार में उपलब्ध समस्त सुविधाओं का वे उपभोग करने लगे थे। परन्तु उनके पिता का निधन (सन् 1918–1919) के पश्चात् उनको स्टेट में ही नौकरी करने को बाध्य होना पड़ा, परन्तु वे जिस स्थान पर एक राज परिवार के साथ रहते थे वही अनुचर होकर रहना स्वभावतः उनके अनुकूल न था, फिर निराला जी की प्रकृति में महत्वाकांक्षा के बीज भी बड़ी मात्रा में मौजूद थे। फलतः उन्हें महिषादल की नौकरी छोड़ देनी पड़ी और कलकत्ता जाकर स्वतन्त्र लेखन का कार्य अपनाना पड़ा। सन् 1923 के आसपास आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के प्रयत्न से रामकृष्ण आश्रम में प्रकाशित होने वाले दार्शनिक–आध्यात्मिक पत्र के सम्पादक का कार्य मिल गया।

कुछ समय पश्चात् मतवाला नामक साहित्य पत्र प्रकाशित हुआ और निराला जी उसके सम्पादकीय विभाग में आ गये। 1924–1927 तक स्वर्वकाल कह सकते हैं उनकी अनेक रचनायें 'मतवाला' में मतावाला पर प्रकाशित होती रही इसे हमं निराला जी का कार्य करते समय उनकी समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति 'मतवाला' के संचालक श्री सेठ महादेव प्रसाद किया करते थे। वास्तव में स्वच्छन्दतावादी प्रकृति की अधिकांश रचनायें इन्हीं दिनों प्रकाशित हुई। इस समय निराला जी युवावस्था के शीर्ष बिन्दु में थे और उनकी प्रतिभा अपने पूर्ण उन्मेष में थी।

1928 के पश्चात् भारतीय परिस्थितियों में निराला जी के साथ एक बड़ा परिवर्तन घटित हुआ, वे कलकत्ता में बीमार पड़ गये और वापस घर आ गये, इसके साथ ही उनकी पत्नी का देहान्त तथा अन्य कुटुम्बियों का एक महामारी में एक साथ निधन हो गया। जिससे निराला जी को मानसिक आघात हुआ। 1930 के बाद देश में मंदी का दौर आया, बेरोजगारी बढ़ी, मध्य वर्ग के लोगों का शोषण होने लगा, आर्थिक समस्या बढ़ गई। कोई भी ऐसा साप्ताहिक या मासिक पत्र न था जिसमें निराला जी को कार्य मिल सके। इन वर्षों में निराला जी को कठिन आर्थिक परिस्थितियों का सामना करना पड़ा, जिससे उनकी मानसिक स्थिति काफी विचलित हुई और इस स्थिति ने उन्हें काफी क्षुब्ध कर दिया।

निराला जी को सामाजिक परिस्थितियों के प्रति व्यंग्य का भाव इसी समय उत्पन्न हुआ और उनके काव्य में दिखाई देने वाली यथार्थोन्मुखी प्रवृत्तियाँ उदय होने लगी। सामराज्यवादी अनुशासन का पहिया निरन्तर घूमता हुआ भारत का भविष्य भाग्य के सहारे चल रहा था जिससे लक्ष्य की प्राप्ति निश्चित नहीं थी। उसने जनमानस की आत्मा को केवल चिंतित ही नहीं किया, वरन् अन्तर्मुखी आदर्श पर भाग्यवादी बना दिया। निराला का कवि व्यक्तित्व, अनुभूति की व्यजंना में नहीं अनुभवगत विचारधारा में व्यक्त किया। यही कारण है कि ''विषय को बौद्धिक धरातल से देखने के कारण शिल्प और निवेदन–योजना में स्वच्छन्दता दिखाई देती है।''

उनकी व्यक्तिगत परिस्थितियाँ उन्हें कठोर यथार्थ के अधिक समीप ले जा रही थी। सन् 1936 के पश्चात् जब हिन्दी में प्रगतिवादी आन्दोलन का सूत्रपात हुआ तब निराला जी ने मार्क्सवाद की द्वन्द्वात्मक भौतिकवादी विचारणा को कभी नहीं अपनाया।

यूँ तो निराला की कविता सन् 1916 के पश्चात् लिखी जाने लगी थी परन्तु उनका पहला काव्य संग्रह 'अनामिका' नाम से 1921 में प्रकाशित हुआ तथा अनामिका विशुद्ध स्वच्छन्दतावादी कृति है। 'पंचवटी' की स्वच्छन्दता बिहार करती हुई राम और सीता की प्रथम झाँकी सौन्दर्य और वीरत्व के मिलन की ही परिचायिका है।

www.ignited.in

प्रकृति सौन्दर्य–भूमि पर नारी की सुन्दर मूर्ति और वीर पुरूष का पौरूष इससे बढ़कर स्वच्छन्दतावाद के उपरकण और क्या होंगे।

परिमल संग्रह 1930 में प्रकाशित हुई। ओजस्विता, प्रखरता और आवेग की दृष्टि से परिमल की कुछ रचनायें नूतन दिशा का संकेत करती हैं। इसी के साथ ही निराला जी की गीत सृष्टि भी यही से प्रारम्भ होती है। परिमल के गीत प्रकृति, सौन्दर्य वर्णन, ऋतु सौन्दर्य से सम्बन्धित हैं। 'यमुना' में अतीत का स्वर्ण स्वप्न समाया हुआ है। यह सब छायावाद स्वच्छन्दतावाद की नयी भूमियाँ है। जिनसे निराला जी का काव्य समृद्ध हुआ है। इन समस्त रचनाओं में प्रयास की कृत्रिमता कहीं नहीं है। ये यौवन काल की अस्थाई अभिव्यक्तियाँ हैं। इसी प्रकार एक अज्य रचना है जिसमें एक ग्रामीण नारी का तालाब में स्नान करते समय का दृश्य दिखाया गया है। इस नारी की 'खजोहरा' के संसर्ग से जो दुर्गति दिखाई गई है वह यथार्थतः की सारी सीमाओं का उल्लंघन कर गई है। यथार्थवाद का अर्थ यदि किसी नारी की दुर्दशा दिखाना है तो इस कविता को अवश्य हम यथार्थवादी कहेंगे।

सामाजिक, राजनीतिक–सांस्कृतिक परिस्थितियाँः–

निराला जी के समय में सामाजिक परिस्थितियॉ बड़ी थी। समाज में नव जागरणकाल चारो तरफ फैला था। मनुष्य अपनी पुरानी मान्यताओं का त्याग करने लगे थे और नवीन नियमों का प्रस्थापन हो रहा था।

''इस सृजन प्रक्रिया का स्वरूप बिल्कुल नया हैं। ईश्वर भी नये विचारों के संसार में उतर आया हैं। तब नये समाज के रूप का वर्णन करता है। सामाजिक जीवन वर्गों में बँटा है। वर्गीय सभ्यता में शोषित वर्ग के ऊपर संवेदनशीलता होना स्वाभाविक है। निराला जी ने दरिद्र जीवन का चित्र इस प्रकार खीचा है–

भीख माँगता है अब राह पर,

मुट्ठी भर हड्डी का यह नर

एक आँख आज के की

पराधीन होकर उस पर पड़ी।

नयी चेतना के समय सामाजिक मर्यादाओं को नया मोड़ मिलता है। युगीन विषमताओं से घबराया हुआ मन जब कर्म प्रेरित होता है। तब परिवर्तन के लक्षण दिखाई देने लगते है। जागरण हो गया है अतः जो परिवर्तन होगा उसका दृश्य खींचा है।

चढ़ी है आँखे जहाँ की उतार लायेगी,

बढ़े हुओं को गिराकर सवार लायेगी

मुसीबत में कटे हैं दिन

मुसीबत में कटी रातें

निराला के चिन्तन की विशेषता यह थी कि उनके लिए सामाजिक क्रान्ति शुरू होती थी। इन निम्न जातियों से और राजनीतिक आन्दोलन की सफलता के लिए वे इस सामाजिक क्रान्ति को अनिवार्य मानते थे। जो ब्राह्मण और क्षत्रिय अपनी उच्चता का दम्भ नहीं छोड़ते, जो अत्यजों को समान अधिकार नहीं दे सकते, वे नये भारत का निर्माण भी नहीं कर सकते। सामाजिक क्रान्ति के बिना राजनीतिक आन्दोलन दुर्बल रहेगा। राष्ट्र की दृढ़ नींव तब पड़ेगी जब जाति–पाँति प्रथा मिटाकर नये सिरे से समाज का गठन होगा।

निराला ने कहा के देश के नेता जिन आर्थिक और राजनीतिक लक्ष्यों को लेकर आगे बढ़ रहे थे, उनसे इस सामाजिक क्रान्ति का सामंजस्य करना चाहिए। निराला वर्ण–व्यवस्था की उपयोगिता अथवा व्यर्थता इतिहास के सन्दर्भ में देखते थे। उनका विचार था कि किसी समय यह वर्ण–व्यवस्था आवश्यक थी और इस व्यवस्था के अर्न्तगत ब्राह्मणों ने सांस्कृतिक क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किया था।

समाज में ऊँच–नीच का भेदभाव मिटाने के लिए अनेक आन्दोलन हुए और निराला ने उन सबका समर्थन किया किन्तु वह उनसे और उन सबसे आगे भी थे क्योंकि शिखासुत्र त्यागकर आचार–विचार दोनों दृष्टियों से वे द्विज और शूद्र की समानता घोषित कर रहे थे। निराला का युग स्वतन्त्रता के संघर्ष का युग था।

राष्ट्रीय कवि निराला के निर्माण में निश्चय ही उस समय की परिस्थितियों ने योगदान दिया। देश परतन्त्रता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था, स्वार्थी और लालची लोग अंग्रेजों से उपाधियाँ पाकर अंग्रेजी राज्य को सींच रहे थे और अपने देशवासियों का गला धोंट रहे थे, ऐसे ही जयचन्दों या जयसिंहों को कवि ने अपनी या शिवाजी की उद्घोषक चिट्ठी लिखकर जगाने का प्रयास किया।

निराला ने भारत की नंगी, भूखी, बिलखती और दरिद्रता का सच्चा अनुभव प्राप्त कर लिया था। अपने आरम्भिक जीवन में उन्होंने पिसती हुई शोषित दलित प्रजा की करूण तथा महिषादल राज्य में देख ली थी। बाद में बैसवाड़े में उनके अपने गाँव में जमीदारों और ताल्लुकेदारों के अत्याचार और शोषण ने उन्हें झकझोर डाला था। कलकत्ता जैसे महानगरों में उन्होंने फुटपाथ पर सोते बेघर–निवर्सन भिक्षुकों के कंकाल देखे थे।

''जूठे पत्तलों के लिए लालायित भूखों की टोलियाँ तथा सड़को के लिए पत्थर तोड़ती श्रम–विगलित मजदूर बालाओं और आहत–अभिमान मिल मजदूरों की विवशता का अनुभव किया था। विषम अर्थ व्यवस्था का अनर्थ उन्होंने पहचान लिया था। एक ओर बड़े–बड़े ऐश्वर्यपूर्ण भवनों का विलास था, दूसरी ओर जेठ की दुपहरी में तपते वर्षा में गलते, सर्दी में ठिठुरते बेघर बेबस निर्धन तड़पता जीवन जी रहे थे, निराला जी ने बंगाल का अकाल देखा, तड़पती और कहराती मानवता का हाहाकार सुना था।''

देश की 90 प्रतिशत जनता गाँवों में रहती थी और हमारा ग्राम समाज अत्यन्त सोचनीय दशा को प्राप्त हो चुका था।

ग्रामीण जीवन का आर्थिक और सांस्कृतिक स्तर बहुत निम्न हो गया था। संयुक्त परिवार प्रथा छिन्न–भिन्न हो रही थी। जमीदारों के दरिन्दे, पटवारी, महाजन, पुलिस के सिपाही, डिप्टी साहब और अन्य कर्मचारी, मुफ्तखोरी, ब्याज आदि में अत्याचार किसानों का तंग करते थे। गाँवों में परम्परागत सामाजिक

व्यवस्थायें, वर्ण–व्यवस्था, सामाजिक नियम, धार्मिक अन्धविश्वास, रूढ़ि, जातिगत प्रथायें, दहेज प्रथा आदि थे। गाँवों में अशिक्षा और गरीबी का अन्धेरा पर्दा छाया हुआ था। कभी–कभी महामारी के प्रकोप से गाँव के गाँव उजड़ जाते है। सामाजिक, राजनैतिक चेतना का अभाव गाँवों में ही था पुरानी पीढ़ी तो भाग्यवादी थी परन्तु नई पीढ़ी में कुछ संघर्ष की आकांक्षाएँ उभरने लगी थी।

देशभर में अंग्रेसी शासन का दमनचक्र जारी था भारतीय जनता परतन्त्रता की चक्की में पिस रही थी भारतीय जनता पर दोहरा अघात था, हमारे समाज–सुधारकों तथा राजनैतिक नेताओं को भी इसी से दो मोर्चो पर संघर्ष करना पड़ रहा था एक सामाजिक बुराइयों के विरूद्ध और दूसरा विदेशी शासन के विरूद्ध। राजाराम मोहनराय, केशवचन्द्र सेन, स्वामी दयानन्द, महाराष्ट्र के जस्टिस रानाडे, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी रामतीर्थ, ऐनीबेसेंट आदि ने ब्रह्म समाज, आर्यसमाज, रामकृष्ण मिशन आदि संस्थाओं की स्थापना करके समाज सुधार के आन्दोलन समूचे भारत में चला दिये थे।

राजनीति के क्षेत्र में भी सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, तिलक, गोखले, गाँधी जी, लाला लाजपराय आदि के सद्प्रयत्नों से ब्रिटिश राज्य के विरूद्ध व्यवस्थित मोर्चा तैयार हो गया था। सत्याग्रह, असहयोग आन्दोलन, स्वदेशी आन्दोलन आदि की धूम थी सशस्त्र क्रान्ति और वर्गसंघर्ष की आवाज बुलन्द होने लगी थी। साम्राज्यवाद की छत्रछाया में पूँजीवाद विकसित हुआ पुराने सामन्तों और जमीदारों का ह्रास होने लगा था।

''पाश्चात्य शिक्षा और सभ्यता के रंग में रंगे भारतीय सरकारी कर्मचारी अमीर नागरिक तथा अन्य भारतवासी देश के अतीत गौरव को भूला बैठे थे तथा देश अभिमान, स्वतन्त्रता आदि की राष्ट्रीय भावनाओं से शून्य होता जा रहा था, सामान्य जनता आत्महीनता का शिकार हो गई थी स्वामी विवेकानन्द जैसे धर्मगुरू भारतीयों को अपने अतीत पर विश्वास करने और हिन्दुत्व की शक्ति का परिचय प्राप्त करने का सन्देश दे रहे थे।''

सांस्कृतिक पुनर्जागरण नव्य आध्यात्मवाद और व्यवहारिक अद्वैत दर्शन की ज्योति न केवल भारत में फैली, अपितु रामकृष्ण मिशन एवं स्वामी विवेकानन्द के सद्प्रयत्नों से भारत के आध्यात्म की विजय का डंका अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भी बजा था।

''धर्म के क्षेत्र में भी नई जागृति आयी, परम्परागत ब्राह्मण धर्म का ढकोसला बुद्धिवाद और मानवतावादी मूल्यों के आघातों से निवारण होने लगा। धर्म के साम्प्रदायिक रथ पर करारी चोटें पड़ी, धर्म की नई व्याख्या और उदार परिभाषा हुई, निवृत्ति के स्थान पर प्रवृत्ति, साम्प्रदायिक कट्टरता की जगह उदारता और सहिष्णुता, स्वार्थ की जगह परमार्थ, व्यक्तिगत साधन के स्थान पर विश्व कल्याण, कायरता की जगह वीरता, अकर्मण्यता के स्थान पर कर्मशीलता, दासता के स्थान पर स्वतन्त्रता की आकांक्षायें सच्चे धर्म के तत्व बने। भारत के चिरनिवृत्त मूलक आध्यात्म का प्रवृत्तिपरक नवोत्थान हुआ।''

निराला पर स्वामी विवेकानन्द का विशेष प्रभाव पड़ा, पौरूष और शक्ति का मूलमन्त्र उन्होंने स्वामी जी से ही प्राप्त किया। स्वामी जी के एक भाषण में कहा गया है–

''हमने बहुत–बहुत आँसू बहाये हैं अब कोमल भाव धारण करने का समय नहीं है कोमलता की साधना करते–करते हमलोग जीते जी मुर्दा हो रहे हैं। हमारे देश के लिए इस समय आवश्यकता है– लोहे की माँस पेशियों और फौलाद की नाड़ी तथा धमनी की। क्योंकि इन्हीं के भीतर वह मन निवास करता है जो शेपाओं एवं ब्रजों से निर्मित है– शक्ति पौरूष, क्षात्र–वीर्य, और ब्रह्मतेज इनके समन्वय से भारत की नई मानवता का निर्माण होना चाहिए। हमारे देश को अब वीरता की आवश्यकता है।'' कहने की आवश्यकता नही कि निराला के काव्य में यही ओजपूर्ण स्वर है।

इस प्रकार अपने युग की समस्त सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों और गतिविधियों का निराला ने अपनी खुली आँखों से अवलोकन किया था। उन्होनें अपने युग की इन परिस्थितियों का सही अध्ययन मनन और चिन्तन करके अपनी एक प्रगतिशील विचारधारा बनाई थी। एक सच्चे युग–चेता साहित्यकार के नाते ही निराला ने अपने युग का आलोड़न–विलोड़न करके उच्च सांस्कृतिक निर्माण के तत्व निकाले थे।

साहित्यक परिस्थितियाँः–

जब कोई विशिष्ट–काव्य–धारा साहित्य में अपना स्थान बनाती है तो उसके पीछे अनेक प्रेरक शक्तियाँ होती है। जाने–अनजाने कवियों पर विभिन्न परिस्थितियों का प्रभाव रहता है। निराला–काव्य या छायावाद की पृष्ठभूमि भी बहुमुखी है साहित्यक परिस्थितियों का भी इस पर विशेष प्रभाव पड़ा है।

यद्यपि आधुनिक काल में नवीनता और राष्ट्रीय संस्कृति का आख्यान भारतेन्दु युग से ही शुरू हो गया था पर कविता के क्षेत्र में नवीनता का जैसा प्रभाव बंगला पर पड़ा वैसा भारतेन्दु युग में हिन्दी कविता पर नहीं।

द्विवेदी युग में हिन्दी कविता में नया मोड़ लिया, खड़ी बोली ने कविता में अभी अपना स्थान बनाया ही था। इस काल में भाषा में व्यवस्था और एकरूपता आई और उसकी और उसकी काव्योपयोगिता सिद्ध करने में भी हरिऔध, मैथिलीशरण गुप्त जैसे कवि प्रत्यनशील थे। परन्तु प्रारम्भ में वह गद्यवत् ही बनी थी, उसमें शुष्कता, इतिवृत्तात्मकता और कल्पना के पीछे रंगों का दोष था। पद भाषा में जो कल्पना की रंगीनी, प्रवाह, रसात्मकता और ध्वन्यात्मकता होनी चाहिए थी उसका इस शती के प्रथम दशक में अभाव रहा।

''द्विवेदी कालीन नैतिकता इतिवृत्तात्मकता आदि कठोर बन्धनों की प्रतिक्रिया–स्वरूप छायावाद खूब फला–फूला। इसके भूल में स्थूल की बजाय सूक्ष्म की बाधा थी।''

अंग्रेजी कवियों का प्रभाव हमारे कवियों पर अमिट रूप से पड़ा, बाइरन, बुर्डस्वर्थ, शेले कीट्स आदि पाश्चात्य रोमाण्टिक कवियों को पढ़ने वाले नवयुवक–कवियों की भावना स्वच्छन्दता की ओर बढ़ी।

उनकी देखा देखी स्वच्छन्द भाव–प्रकाशन की प्रवृत्ति हिन्दी में जगी पुरानी लकीर पीटने में हमारे कवियों को घोर नफरत हो गयी। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि छायावाद के पूर्व ही हिन्दी में एक स्वच्छन्दतावादी काव्य–प्रवृत्ति का विकास हो रहा था परन्तु काव्य में छायावाद की प्रतिष्ठा करने का श्रेय इन कवियों को नहीं, बंगला के अध्येता प्रसाद, पन्त, निराला ही उसके प्रवर्तक हैं।

श्रीधर पाठक की तरह प्रसाद जी की आरम्भिक कविताएँ भी स्वन्छन्दतावादी प्रवृत्ति की द्योतक है वस्तुतः 1905 से ही वे इस ढंग के काव्य की रचना कर रहे थे, परन्तु छायावाद के अर्न्तगत

नवीन शैली और नवीन भावों से ओत–प्रोत उनकी कविताएँ 'झरना' में ही अच्छी तरह पायी जाती हैं।

छायावाद के मूल में असन्तोष की भावना है वस्तुतः जीवन के दृष्टिकोण बदल रहे थे। प्राचीन रूढ़ियों ने व्यर्थ के नैतिक बन्धनों से नवयुवकों की अन्तश्चेतना को कुंठित कर रखा था। प्राचीन विवाह–सन्बन्ध प्रेम की आन्तरिक उमंग पर आधारित न था।

पाश्चात्य शिक्षा के प्रभाव से नये कवि उन्मुक्त प्रेम की अभिलाषी बनने लगे थे अतः उनका मानसिक असंतोष कविता में व्यंजित होने लगा था।

वैज्ञानिक युग की उपज पूँजीवादी पद्धति और उसके शोषण ने समाज को विनाश पीड़ा, एवं व्यथा में डुबो दिया था।

राजनीति मे गाँधी आत्मपीड़न का युग था इस युग का प्रभाव छायावादी कवियों पर बराबर पाया जाता है।

इस प्रकार वैयक्तिक एवं सामाजिक व्यथा से असन्तोष की उग्र भावना हमारे कवियों में जागृत हुई।

छायावादी काव्यधारा में परम्परा के आन्तरिक स्वरूपों को वैज्ञानिक भौतिकवाद की कसौटी में कसकर जैसा गत्यात्मक रूप मिला है उसे भारतीय सांस्कृतिक की पाचन शक्ति का अभिनव रूप कहा जा सकता है।

छायावादी काव्य का एक नया पक्ष जो विश्व–मानवतावादी है, वह उच्चतर आदर्श को रखता हुआ भी यथार्थपरक जगत से दूर का नहीं है। छायावादी काव्य का कल्पना सत्य, भविष्य की आकाँक्षाओं को, मानवमात्र के स्वभाविक विकास को तथा उसके ज्ञानवर्धन में किसी अतिवादी चिन्तन के लक्ष्य को युगानुकूल सन्तुलित दृष्टि देता है। इस काव्य धारा के बीच रूप में आदर्श और यथार्थ की गति को समरूपा माना गया है।

यद्यपि अनुभूति की अभिव्यक्ति में व्यक्तित्व की मानसिक स्थिति का पूर्ण चित्र खींचा गया है जो इस काव्य की व्यापकता का स्वरूप निर्माण करने में सहायक हुआ है। यह निर्माण शक्ति आत्मा ही की है।

इस अर्थ में छायावाद, अनेकमुखी, तथ्यों को एकमय करने वाला काव्य पदार्थ है स्वच्छन्दतावादी काव्य के विषय में प्रकृति पर प्रकाश डालते हुए राबर्ट लैगव्यूम ने ठीक ही कहा है–

''चिन्तन के क्षेत्र में अनेक तत्व की एकता है''।

छायावाद कविता ने जो आत्मभिव्यक्ति की आकाँक्षा प्रकट की वह वस्तुतः आत्म प्रसार की आकाँक्षा थी। पुरानी दुनिया की सीमित चारदिवारी के भीतर उसका दम घुट रहा था। नये विज्ञान के उसके सामने संसार का विराट रूप रख दिया, एक ओर नये–नये देश परिचय की सीमा में आये और दूसरी ओर प्रकृति की विराटता का बोध हुआ।

इस प्रकार निराला काव्य 20 वीं शती में विकसित होने वाली नई साहित्यक चेतना की देन उसके निर्माण अंग्रेजी की रोमांटिक काव्य प्रवृत्ति, बंगला की भावात्मक स्वच्छन्द प्रवृत्ति और हिन्दी की स्वच्छन्द काव्य धारा ने महत्वपूर्ण योग दिया।

निराला ने बुर्डस्वर्थ, शैले कीट्स, टेनिसन आदि अंग्रेजी रोमांटिक कवियों को भी पढ़ा था और बंगला भाषा साहित्य और संगीत का भी गम्भीर अध्ययन किया था।

कवि निराला के निर्माण में अंग्रेजी रोमांटिक तथा बंगला साहित्य दोनों की प्रवृत्तियों ने महत्वपूर्ण योग दिया।

निराला के सम्बन्ध में यह नहीं कहा जा सकता कि उन पर अमुक रोमांटिक कवि का प्रभाव पड़ा उन्होंने रोमांटिक प्रभाव को सामूहिक रूप से ही अपनाया है।

निराला की सूक्ष्म प्रेमभावना तथा प्रेम के उदात्तीकरण की प्रवृत्ति पर शैले की 'एलास्टर' कविता का प्रभाव भी लक्षित होता है अपने विचारों और भावों में निराला पूर्णता रोमांटिक है।

उन्होंने मानवतावाद का सच्चा आदर्श प्रस्तुत किया, परम्परागत रूढ़ियों की कड़ियाँ तोड़ने में वे सबसे आगे थे, विद्रोही नवीन सामाजिक एवं सांस्कृतिक आदर्शों की उन्होंने भव्य प्रतिष्ठा की। छायावादी कवियों में निराला और पन्त पर अंग्रेजी गीतिकाव्य का प्रभाव सर्वाधिक पड़ा, आत्मभिव्यक्ति, कोमलकान्त, पदावली, भावमयता, नवीन भाषाशैली और नया सौन्दर्य बोध आदि गीतिकाव्य की समस्त विशेषताएँ निराला काव्य में पायी जाती है।

निराला न केवल बंगला और अंग्रेजी संगीत–पद्धति को अपनाया न केवल मुक्तकाव्य का प्रयोग किया बल्कि मानवीकरण, विशेषण–विवपर्य, ध्वन्यर्थव्यंजना आदि पश्चात् अंलकारों को भी अपनाया यद्यपि भारतीय काव्य के लिए ये सर्वथा अपरिचित अंलकार नहीं थे आदि के रूप में सौन्दर्य ध्वन्यर्थव्यंजना के खूब प्रयोग मिलते है।

इस प्रकार इस सम्पूर्ण संक्षित्त विवेचन से स्पष्ट है कि निराला पर अंग्रेजी रोमांटिक काव्य का पर्याप्त प्रभाव पड़ा।

भावपक्ष, विषय–वस्तु, विचारधारा तथा कलापक्ष आदि सभी क्षेत्रों में यह सब होते हुए भी निराला का काव्य भारतीय दर्शन, संस्कृति एंव भारतीय भाषा–साहित्य–परम्परा का द्योतक होने से शत्–प्रतिशत् भारतीय काव्य है, उनकी रचनायें कवि की भौतिक कृति है अनुकृति नहीं।

उत्तरकालः–

अनवरत संघर्षों को सहते हुए निराला आर्थिक एवं शारीरिक दृष्टि से दुर्बल हो चुके थे किन्तु अब तक विरोधियों के मुख बन्द हो चुके थे तथा विद्वान साहित्यकारों ने उन्हें महाकवि के रूप में स्वीकार कर लिया था। उन्हें सम्मान देने के लिए सन् 1947 में काशी में उनकी स्वर्ण जयन्ती मनाई गयी तथा 1960 की बसन्त पंचमी को पुनः उनके अभिनन्दन समारोह का भव्य आयोजन वाराणसी के राष्ट्रभाषा विद्यालय में किया गया किन्तु अब इन सब प्रयासों का निराला पर कोई प्रभाव न पड़ सका। उनका संतृप्त ह्रदय विश्व–करूणा से व्याप्त हो चुका था परमात्मा से मानव कल्याण की प्रार्थना करने वाला कवि बाहय सुख–दुख से निर्लिप्त एवं आत्मविस्मृत हो चुका था। इस अवस्था को लक्षित कर निराला पर मानसिक विशान्ति का सन्देह किया उनके समकालीन लेखक–समीक्षक डा0 बच्चनसिंह ने लिखा है– ''वर्तमान समय में इनकी आकाँक्षा की आपूर्ति ने

इन्हें अत्यधिक त्रस्त कर दिया है और काव्य रचना पर इसका प्रभाव दृष्टिकगोचर होता है।'' सत्य यह है कि भावावेश की चरम सीमा पर पहुँचकर निराला आलोचनाओं एवं आशंकाओं के प्रति पूर्णतः तटस्थ हो गये थे।

निराला के जीन के अन्तिम दिवस घोर अवस्था में व्यतीत हुए निरन्तर संघर्ष एव सुखाभाव तथा विवशताओं एवं विषमताओं की श्रंखला ने उनके सुगठित शरीर को कृशकाप बना दिया।

शोध एवं जलोदा रोग से ग्रस्त होने के साथ उन्हें हार्निया की पीड़ा तीव्र हो चुकी थी। चिकित्सकों के प्रयास भी निराला को इस असाध्य रोग से बचा नहीं पाये। 15 अक्टूबर 1961 की सन्ध्या को मृत्यु से संघर्ष करते हुए अपनी मधुर मुस्कान में जीवन भर की पीड़ा छिपाते हुए इस अपराजेय योद्धा ने महाप्रयास किया।

सहायक ग्रंथ सूची

1. कुल्लीभाट – गंगा पुस्तक माला कार्यालय, लखनऊ सन्–1964ई0
2. चतुरी–चमार – किताब महल, इलाहाबाद सन्–1967 ई0
3. चयन – कल्याण दास एण्ड ब्रदर्स, वाराणसी सम्वत्–2014
4. देवी – निरूपमा प्रकाशन शहराबाग, प्रयाग सन्–1962ई0
5. पन्त और पल्लव – गंगा पुस्तक माला कार्यालय, लखनऊ प्रथम वृत्ति सन्–1966ई0